मेरा अपना निजी शून्य

बचपन के ख्वाबों से लेकर सैद्धान्तिक भौतिकी के गलियारों तक

एलन लाइटमैन

"शून्य से शून्य ही मिलेगा।"
(विलियम शेक्सपीयर, *किंग लीयर*)

"मनुष्य न तो उस शून्य को देखने में सक्षम है जहाँ से वह उभरा है, और न ही उस अनन्त को देखने में जिसमें वह समा जाता है।"
(ब्लेज़ पास्कल, पेनसीस, *दी मिज़री ऑफ मैन विदाउट गॉड*)

"दीप्तीमान ईथर यहाँ बेकार साबित होगा क्योंकि यहाँ विकसित नज़रिया स्थान के सापेक्ष परम विराम (की स्थिति) का उन्मूलन कर देगा।"
(अल्बर्ट आइंस्टाइन, *ऑन दी इलेक्ट्रोडाएनैमिक्स ऑफ मूविंग बॉडीज़*)

शून्य से मेरा सबसे जीवन्त टकराव एक असाधारण अनुभव के दौरान उस समय हुआ था जब मैं 9 वर्ष का बच्चा था। रविवार की दोपहर थी। मैं टेनेसी के मेम्फिस शहर के अपने घर के एक बेडरूम में अकेला खड़ा था और खिड़की में से बाहर की खाली सुनसान गली को देख रहा था और बहुत दूर गुज़रती किसी ट्रेन की हल्की-सी आवाज़ सुन रहा था। और यकायक मैंने महसूस किया कि मैं स्वयं को अपने शरीर से बाहर जाकर निहार रहा हूँ। मैं ब्रह्माण्ड में कहीं था। चन्द मुख्तसर पलों के लिए मैंने महसूस किया कि मैं अपने पूरे जीवन को, दरअसल पूरे ग्रह के जीवन को समय के एक विशाल समन्दर में एक छोटी-सी टिमटिमाहट के रूप में देख रहा हूँ, जहाँ मेरे अस्तित्व से पहले समय का एक अनन्त विस्तार है और उसके आगे समय का एक अन्तहीन फैलाव है। मेरी इस क्षणिक संवेदना में अन्तहीन स्थान (अन्तरिक्ष) शामिल था। शरीर या मस्तिष्क से मुक्त होकर मैं किसी तरह एक विस्तीर्ण अन्तरिक्ष में, सौर मण्डल और यहाँ तक कि निहारिका से भी कहीं दूर तैर रहा था, और वह अन्तरिक्ष आगे-और-आगे तक फैला हुआ था। मैंने महसूस किया कि मैं एक विशाल ब्रह्माण्ड में एक महत्वहीन कण हूँ, और वह ब्रह्माण्ड मेरी या किसी अन्य जीव की और उनके अस्तित्व के छोटे-छोटे बिन्दुओं की तनिक भी परवाह नहीं करता। वह अन्तरिक्ष तो, बस था। और मैंने महसूस किया कि मैंने अपने बचपन में खुशी या गम, जो कुछ अनुभव किया, और आगे भी जो कुछ मैं अनुभव करूँगा, उसका चीज़ों की इस विशाल व्यवस्था में कोई अर्थ नहीं है। यह बोध मुक्तिदायक भी था और डरावना भी, एक साथ। फिर वह क्षण बीत गया और मैं वापिस अपने शरीर में था।

यह विचित्र यथार्थ-भ्रम चन्द मिनट के लिए रहा। उसके बाद मैंने इसका अनुभव फिर कभी नहीं किया। हालाँकि लगता तो ऐसा है कि शून्य बाकी सारी चीज़ों के साथ-साथ चेतना को भी बाहर कर देगा, मगर चेतना बचपन के उस अनुभव का हिस्सा थी परन्तु वैसी आम चेतना नहीं जिसे मैं अपनी खोपड़ी के तीन पाउंड ग्रे मैटर में तलाश कर सकूँ । वह तो एक अलग ढंग की चेतना थी। मैं धार्मिक नहीं हूँ और मैं पारलौकिक में विश्वास भी नहीं करता। मैंने एक क्षण के लिए भी यह नहीं सोचा कि मेरे मस्तिष्क ने वास्तव में मेरे शरीर को छोड़ दिया था। फिर भी चन्द क्षणों के लिए मैंने उस परिचित परिवेश और उन विचारों की गहन अनुपस्थिति महसूस की जिनके आधार पर हम अपने जीवन को धरातल से जोड़ते हैं। यह एक किस्म का शून्य था।

शून्य के अलग-अलग अर्थ

अरस्तू ने कहा था कि किसी चीज़ को समझने के लिए हमें यह समझना

होता है कि वह क्या नहीं है, और शून्य किसी भी चीज़ के होने का सर्वथा विलोम है। प्राचीन यूनानियों का मत था कि पदार्थ को समझने के लिए हमें 'रिक्तता' या पदार्थ की अनुपस्थिति को समझना होगा। दरअसल, ईसा पूर्व पाँचवीं सदी में ल्यूसिपस[1] ने कहा था कि रिक्तता के बगैर कोई गति नहीं हो सकती क्योंकि तब कोई ऐसा खाली स्थान नहीं होगा जिसमें पदार्थ गति कर सके। बौद्ध मत के अनुसार, अपने अहं को समझने के लिए हमें शून्यता की अहंरहित अवस्था को समझना होगा। जैसा कि विलियम गोल्डिंग[2] ने अपने उपन्यास *लॉर्ड ऑफ द फ्लाइस* में सशक्त ढंग से तलाश किया था, समाज के सभ्य बनाने वाले प्रभावों को समझने के लिए हमें समाज से बाहर के मनुष्यों के व्यवहार को समझना होगा।

अरस्तू का अनुसरण करते हुए, मैं कहना चाहूँगा कि शून्य क्या नहीं है। यह कोई अनोखी या परम अवस्था नहीं है। अलग-अलग सन्दर्भों में शून्य का अलग-अलग अर्थ होता है। जीवन के नज़रिए से देखें, तो शून्य का अर्थ मृत्यु हो सकता है। किसी भौतिक-शास्त्री के लिए इसका अर्थ पदार्थ और ऊर्जा की पूर्ण अनुपस्थिति हो सकता है (जो असम्भव है, जैसा कि हम आगे देखेंगे), या समय व स्थान की अनुपस्थिति भी हो सकता है। किसी प्रेमी के लिए शून्य का अर्थ अपने प्रिय की अनुपस्थिति हो सकता है। माता-पिता के लिए इसका अर्थ बच्चे की अनुपस्थिति हो सकता है, चित्रकार के लिए रंगों का अभाव, पाठक के लिए पुस्तक का अभाव हो सकता है। हमदर्दी से भरे किसी व्यक्ति के लिए इसका अर्थ भावनात्मक स्तब्धता हो सकता है। पास्कल[3] जैसे धर्म शास्त्री या दार्शनिक के लिए शून्यता का अर्थ समय-विहीनता या स्थान-विहीन अनन्त था जो सिर्फ ईश्वर को ज्ञेय है। जब किंग लीयर अपनी बेटी कॉर्डीलिया[4] से कहता है, "शून्य में से शून्य ही निकलता है", तो उसका अर्थ था कि यदि उसने राजा के प्रति असीम प्रेम का प्रदर्शन न किया तो साम्राज्य में से उसे उसकी दो चापलूस बहनों की तुलना में बहुत कम हिस्सा मिलेगा। दूसरे 'शून्य' का आशय उन दो बहनों द्वारा प्रेम प्रदर्शन के अतिरेक की तुलना में कॉर्डीलिया की खामोशी से था, जबकि पहला शून्य कॉर्डीलिया की एक कमरे की झोंपड़ी की तुलना उनके

---

[1] पाँचवीं सदी के एक यूनानी दार्शनिक जिन्होंने 'थियरी ऑफ ऐटोमिज़्म' को प्रस्तावित किया था जिसके मुताबिक पदार्थ समांगी/होमोजीनस है और अनगिनत अभाज्य कणों से बना है ।

[2] साहित्य के नोबल पुरस्कार से सम्मानित ब्रिटिश लेखक, नाटककार व कवि (1911-1993)।

[3] ब्लेज़ पास्कल (1623-1662) एक फ्रांसिसी गणितज्ञ थे। मेकैनिकल कैल्क्युलेटर का आविष्कार किया, प्रोबैबिलिटी थियरी की बुनियादी चर्चाओं में इनका योगदान था। भौतिकशास्त्री, लेखक और ईसाई धर्म के दार्शनिक भी थे।

[4] विलियम शेक्सपीयर के नाटक 'किंग लीयर' की पात्र।

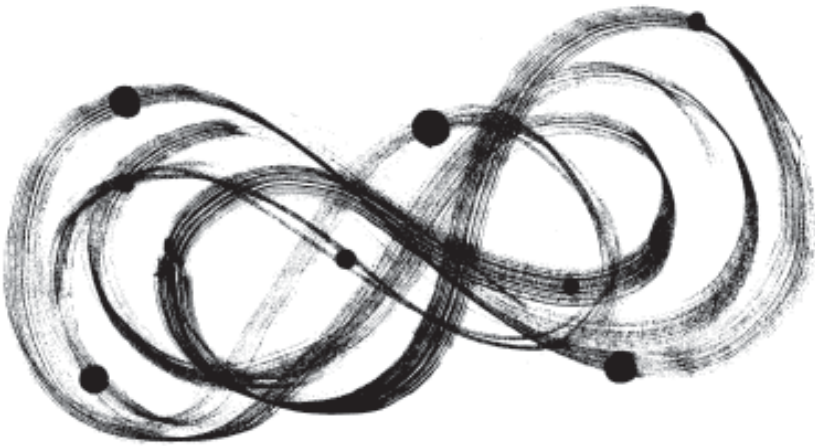

वैभवशाली महलों से करता है।

यद्यपि अलग-अलग परिस्थितियों में शून्य के अर्थ अलग-अलग हो सकते हैं, मगर मैं जिस बात को रेखांकित करना चाहता हूँ वह शायद स्वतः स्पष्ट ही है: इसके सारे अर्थों में हमारी जानी-मानी किसी भौतिक चीज़ या परिस्थिति से तुलना शामिल होती है। अर्थात् शून्यता एक सापेक्षिक अवधारणा है। हम ऐसी किसी चीज़ की कल्पना नहीं कर सकते जिसका किसी भौतिक वस्तु, विचारों या हमारे अस्तित्व की परिस्थितियों से कोई सम्बन्ध न हो। खुशी की बात किए बगैर मायूसी का कोई अर्थ नहीं है। गरीबी को एक न्यूनतम आमदनी और जीवन स्तर के रूप में परिभाषित किया जाता है। भरे पेट का अहसास खाली पेट के सापेक्ष ही होता है। बचपन में जिस शून्यता का अनुभव मैंने किया था वह मेरे शरीर और समय में केन्द्रित संवेदना के सापेक्ष था।

भौतिकी शून्य

विज्ञान की भौतिक दुनिया में शून्यता का मेरा पहला अनुभव तब हुआ था जब मैं कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में सैद्धान्तिक भौतिकी का स्नातक छात्र था। अपने दूसरे वर्ष में मैंने एक अत्यन्त कठिन कोर्स लिया जिसका नाम था क्वांटम फील्ड थियरी। यह विषय बताता है कि कैसे समस्त स्थान 'ऊर्जा क्षेत्र' से भरा है, जिन्हें भौतिक-शास्त्री आम तौर पर मात्र 'क्षेत्र' कहते हैं। गुरुत्व का एक *क्षेत्र* होता है, विद्युत और चुम्बकत्व का एक *क्षेत्र* होता है वगैरह। जिसे हम भौतिक पदार्थ के रूप में मानते हैं, वह वास्तव में अन्तर्निहित मूल *क्षेत्र* में उत्पन्न उत्तेजना है। एक प्रमुख बात यह है कि क्वांटम भौतिकी के

नियमों के अनुसार ये सारे *क्षेत्र* लगातार छटपटाते रहते हैं - किसी भी *क्षेत्र* के लिए पूरी तरह सुप्त रहना असम्भव है। और इस छटपटाहट की वजह से उप-परमाणविक कण (जैसे इलेक्ट्रॉन और उनके विलोम कण पॉज़िट्रॉन) एक क्षण के लिए प्रकट होते हैं और फिर से गुम हो जाते हैं। ऐसा तब भी होता है जब कोई टिकाऊ पदार्थ न हो। स्थान के उस हिस्से को जिसमें न्यूनतम सम्भव ऊर्जा हो, भौतिक-शास्त्री निर्वात (शून्य) कहते हैं। मगर शून्य भी *क्षेत्रों* से मुक्त नहीं हो सकता। *क्षेत्र* तो अनिवार्य रूप से हर स्थान में फैले होते हैं। और चूँकि वे लगातार छटपटाते रहते हैं, इसलिए उनमें लगातार ऊर्जा व पदार्थ उत्पन्न होते रहते हैं, कम-से-कम छोटी-छोटी अवधियों के लिए। लिहाज़ा, आधुनिक भौतिकी का 'निर्वात' प्राचीन यूनानी लोगों की रिक्तता नहीं है। रिक्तता का अस्तित्व नहीं होता। ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रह्माण्ड का हर घन सेंटीमीटर स्थान, चाहे जितना खाली लगे, घटते-बढ़ते *क्षेत्रों* का और प्रकट-अप्रकट होते उप-परमाणविक कणों का बेतरतीब सर्कस है। यानी पदार्थ के स्तर पर शून्यता जैसी कोई चीज़ नहीं होती।

गौरतलब है कि 'निर्वात' की सक्रिय प्रकृति को प्रयोगशाला में देखा जा चुका है। इसका मुख्य उदाहरण हाइड्रोजन परमाणु में इलेक्ट्रॉन की ऊर्जाएँ हैं जिन्हें उनके द्वारा उत्सर्जित प्रकाश की मदद से काफी सटीकता से नापा जा सकता है। क्वांटम यांत्रिकी के मुताबिक, निर्वात के विद्युतीय व चुम्बकीय क्षेत्र निरन्तर क्षणजीवी इलेक्ट्रॉन व पॉज़िट्रॉन पैदा करते रहते हैं। ये प्रेतनुमा कण निर्वात में से अस्तित्व में आते हैं, अपने करीब एक अरबवें सेकण्ड के एक अरबवें भाग के जीवन का लुत्फ उठाते हैं और फिर गायब हो जाते हैं।

कथित रूप से शून्य से घिरे किसी अलग-थलग हाइड्रोजन परमाणु में, केन्द्र में स्थित प्रोटॉन क्षणजीवी निर्वात इलेक्ट्रॉन्स को अपनी ओर आकर्षित करता है और निर्वात पॉज़िट्रॉन को विकर्षित करता है जिसकी वजह से उसका विद्युत आवेश थोड़ा कम हो जाता है। प्रोटॉन के आवेश में यह थोड़ी-सी कमी परिक्रमा कर रहे (गैर-निर्वात) इलेक्ट्रॉन की ऊर्जा को थोड़ा-सा बदल देती है। इसे भौतिक-शास्त्री विलिस लैम्ब के नाम पर *लैम्ब प्रभाव* कहते हैं और इसे सबसे पहले 1947 में नापा गया था। ऊर्जा में परिवर्तन बहुत कम होता है - 10 अरब भाग में करीब 3 भाग का फर्क आता है। मगर यह सिद्धान्त के पेचीदा समीकरणों से मेल खाता है। यह निर्वात के क्वांटम सिद्धान्त की ज़बर्दस्त पुष्टि है। खाली स्थान के बारे में इतना कुछ समझ पाना मानव बुद्धि की जीत है।

क्वांटम निर्वात की समझ बनने से पहले भी खाली स्थान - यानी शून्य - की अवधारणा ने आधुनिक

भौतिकी में प्रमुख भूमिका अदा की है। मध्य उन्नीसवीं सदी के परिणामों के मुताबिक प्रकाश वास्तव में विद्युत-चुम्बकीय ऊर्जा की चलती हुई तरंग है। और यह परम्परागत समझ रही है कि समस्त तरंगों - जैसे ध्वनि व पानी की तरंगों - को आगे बढ़ने के लिए किसी माध्यम की ज़रूरत होती है। कमरे से हवा निकाल दीजिए तो आप किसी की बात सुन नहीं पाएँगे। झील में से पानी हटा दीजिए और आप लहरें पैदा नहीं कर पाएँगे। प्रकाश की तरंगों को वहन करने वाला भौतिक माध्यम ईथर नामक एक मायावी पदार्थ माना गया था। चूँकि हम दूरस्थ तारों का प्रकाश देख पाते हैं, इसलिए ज़रूरी था कि पूरे अन्तरिक्ष में ईथर भरा हो। यानी खाली स्थान जैसी कोई चीज़ थी ही नहीं। स्थान ईथर से भरा था।

1887 में भौतिक शास्त्र के सबसे मशहूर प्रयोगों में दो अमरीकी भौतिक शास्त्रियों ने ईथर में पृथ्वी की गति को नापने की कोशिश की। ये वैज्ञानिक जहाँ काम करते थे वह आजकल क्लीवलैंड का केप वेस्टर्न रिज़र्व विश्वविद्यालय है। उनका प्रयोग नाकाम रहा। या यों कहें कि वे ईथर का कोई प्रभाव नहीं पकड़ पाए। इसके बाद 1905 में 26-वर्षीय अल्बर्ट आइंस्टाइन ने सुझाया कि ईथर का अस्तित्व ही नहीं है। इसकी बजाय उनका प्रस्ताव था कि अन्य तरंगों के विपरीत प्रकाश पूरी तरह खाली स्थान में आगे बढ़ सकता है। यह सब क्वांटम भौतिकी से पहले की बातें हैं।

ईथर से इन्कार और लिहाज़ा सचमुच के खाली स्थान को स्वीकार करना, यह युवा आइंस्टाइन की एक ज़्यादा गहरी परिकल्पना में से उभरा थाः ब्रह्माण्ड में परम विश्राम की स्थिति नहीं होती। परम विश्राम के बगैर निरपेक्ष गति भी सम्भव नहीं है। आप किसी निरपेक्ष मायने में यह नहीं कह सकते कि कोई ट्रेन 50 कि.मी. प्रति घण्टे की रफ्तार से चल रही है। आप मात्र यह कह सकते हैं कि वह ट्रेन किसी अन्य वस्तु (जैसे किसी स्टेशन) के सापेक्ष 50 कि.मी. प्रति घण्टे की रफ्तार से चल रही है। दो वस्तुओं के बीच सापेक्ष गति का ही कोई अर्थ है। आइंस्टाइन ने ईथर की छुट्टी इसलिए की क्योंकि यह ब्रह्माण्ड में एक परम विश्राम की सन्दर्भ चौखट स्थापित कर देता। यदि ईथर नामक पदार्थ पूरे अन्तरिक्ष में भरा हो, तो आप कह सकते हैं कि कोई वस्तु विश्राम की अवस्था में है या नहीं, ठीक उसी तरह जैसे किसी झील में नौका के बारे में कह सकते हैं कि वह पानी के सापेक्ष गति में है या नहीं। लिहाज़ा, आइंस्टाइन के काम के ज़रिए भौतिक खालीपन अर्थात् शून्यता का विचार ब्रह्माण्ड में परम विश्राम की अवस्था को खारिज करने के विचार से जुड़ गया।

कुल मिलाकर, पहले ईथर था जो पूरे अन्तरिक्ष में भरा हुआ था। फिर आइंस्टाइन ने ईथर को खो दे दी,

सचमुच खाली स्थान रह गया। इसके बाद अन्य भौतिक शास्त्रियों ने एक बार फिर इस खाली स्थान को क्वांटम क्षेत्रों से भर दिया। मगर क्वांटम क्षेत्र परम विश्राम की सन्दर्भ चौखट को बहाल नहीं करते क्योंकि ये अन्तरिक्ष में अचर पदार्थ नहीं हैं। तो आइंस्टाइन का सापेक्षता का सिद्धान्त यथावत रहा।

भौतिकी यथार्थ

क्वांटम क्षेत्र सिद्धान्त के प्रवर्तकों में से एक थे किंवदन्ती बन चुके भौतिक शास्त्री रिचर्ड फाइनमैन। फाइनमैन कैल्टेक (कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी) में प्रोफेसर थे और मेरी शोध प्रबन्ध कमेटी के सदस्य। 1940 के दशक के अन्त में फाइनमैन व अन्य वैज्ञानिकों ने यह सिद्धान्त विकसित किया था कि कैसे इलेक्ट्रॉन शून्य के प्रेत कणों के साथ अन्तर्क्रिया करते हैं। उसी दशक की शुरुआत में एक युवा अहंकारी भौतिक शास्त्री के रूप में फाइनमैन मैनहैटन प्रॉजेक्ट[5] में काम कर चुके थे। 1970 के दशक में जब मैं उनसे मिला था, तब तक वे थोड़े सौम्य हो चुके थे मगर फिर भी वे प्रदत्त ज्ञान को पलटने को हर क्षण तैयार रहते थे। वे रोज़ाना सफेद कमीज़, सिर्फ सफेद कमीज़ पहनते थे क्योंकि उनका मानना था इन्हें किसी भी रंग के पेंट के साथ पहना जा सकता है और उन्हें कपड़ों पर वक्त बरबाद करने से चिढ़ थी।

फाइनमैन को दर्शन-शास्त्र से भी घोर अरुचि थी। हालाँकि वे काफी चतुर थे मगर दुनिया को सीधे ढंग से देखते थे और खालिस परिकल्पनाओं या व्यक्तिनिष्ठ विचारों की अटकलें लगाने के फेर में नहीं पड़ते थे। वे क्वांटम शून्य के व्यवहार के बारे में घण्टों बातें कर सकते थे और करते भी थे मगर शून्यता के दार्शनिक अथवा धर्मशास्त्रीय पक्ष पर एक मिनट भी ज़ाया नहीं करते थे। फाइनमैन के साथ अपने अनुभव से मैंने सीखा कि व्यक्ति 'क्यों' जैसे सवालों (जो वैज्ञानिक सत्यापन के दायरे से कोसों दूर है) में उलझे बगैर भी महान वैज्ञानिक हो सकता/ती है।

अलबत्ता, फाइनमैन यह बखूबी समझते थे कि दिमाग स्वयं अपना यथार्थ रच सकता है। यह समझ उनके द्वारा कैल्टेक में 1974 में दिए गए दीक्षान्त भाषण में उजागर हुई थी (यह मेरे स्नातक उपाधि प्राप्त करने का वर्ष था)। मई के अन्त में यह एक खौलता हुआ दिन था। कार्यक्रम खुले में हुआ था जहाँ हम स्नातक लोग अपनी टोपियों और गाउन्स में पसीने से तरबतर हो रहे थे। अपने भाषण में फाइनमैन ने कहा था कि कोई भी वैज्ञानिक निष्कर्ष प्रकाशित करने से

[5] *मैनहैटन प्रॉजेक्ट वो शोध एवं विकास का प्रॉजेक्ट था जिसके तहत दुनिया के सबसे पहले परमाणु शस्त्र बनाए गए थे। यह काम दूसरे विश्व युद्ध के समय संयुक्त राष्ट्र ने यूनाइटेड किंगडम और कैनेडा के सहयोग से किया था।*

पहले हमें यह विचार करना चाहिए हम किस-किस ढंग से गलत हो सकते हैं। उन्होंने कहा था, "पहला सिद्धान्त है कि आप स्वयं को उल्लू न बनाएँ - और आप वे इन्सान हैं जिसे सबसे आसानी से उल्लू बनाया जा सकता है।"

वाचोव्स्की ब्रदर्स की महत्वपूर्ण फिल्म *द मैट्रिक्स* (1999) में जब हम कथानक में पूरी तरह डूब चुके होते हैं, तब यह पता चलता है कि पात्रों द्वारा अनुभूत समस्त यथार्थ - सड़कों पर पैदल चलते लोग, इमारतें और रेस्तराँ और नाइट क्लब्स, शहर का पूरा नज़ारा - एक दृष्टिभ्रम (मायाजाल) है, एक नकली फिल्म है जो एक मास्टर कम्प्यूटर इन्सानों के दिमाग में चला रहा है। वास्तविक यथार्थ तो एक उजाड़ और वीरान ग्रह है जिसमें मनुष्य पत्तीनुमा फलियों में मूर्च्छित कैदी हैं, और मशीनों को चलाने के लिए उनकी पूरी जीवन-ऊर्जा निचोड़ ली गई है। मेरा मत है कि अपने जीवन में हम जिसे यथार्थ कहते हैं, उसमें से अधिकांश भी भ्रम है और हम जितना स्वीकार करते हैं, उसके मुकाबले विघटन और शून्यता के कहीं ज़्यादा करीब हैं।

बात को समझाने की कोशिश करता हूँ। यह एक अत्यन्त दुखदायी विचार है मगर पिछली दो सदियों में वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है - कि हम मनुष्य, और समस्त जीवधारी, पूर्णतः पदार्थ हैं। कहने का मतलब यह है कि हम भौतिक परमाणुओं से और सिर्फ भौतिक परमाणुओं से बने हैं। सटीकता से देखें तो एक औसत मनुष्य $7x10^{27}$ परमाणुओं (70,000 खरब खरब परमाणुओं) से बना होता है - इनमें से 65 प्रतिशत ऑक्सीजन, 18 प्रतिशत कार्बन, 10 प्रतिशत हाइड्रोजन, 3 प्रतिशत नाइट्रोजन, 1.4 प्रतिशत कैल्शियम, 1.1 प्रतिशत फॉस्फोरस और अल्प मात्रा में 54 अन्य तत्व होते हैं। हमारे सारे ऊतक और माँसपेशियाँ, अंग और मस्तिष्क की कोशिकाएँ - सब परमाणुओं से बने हैं। इसके अलावा कुछ नहीं है। एक विशाल ब्रह्माण्डीय सत्ता को हम सब परमाणुओं की जमावट नज़र आएँगे। इतना तो तय है कि यह एक विशेष जमावट है। कोई चट्टान व्यक्ति के समान व्यवहार नहीं करती। मगर चेतना और विचार के रूप में हम जो मानसिक संवेदनाएँ महसूस करते हैं, वे तंत्रिकाओं के बीच होने वाली शुद्धतः भौतिक विद्युतीय व रासायनिक अन्तर्क्रियाओं के शुद्धतः भौतिक परिणाम हैं और तंत्रिकाएँ स्वयं भी, और कुछ नहीं, परमाणुओं की जमावट हैं। और जब हम मरते हैं तो यह विशेष जमावट बिखर जाती है। हमारी अन्तिम साँस के समय हमारे शरीर में परमाणुओं की कुल संख्या स्थिर रहती है। जब ये हवा, पानी और मिट्टी में विलीन होते हैं तो प्रत्येक परमाणु को चिन्हित करके देखा जा सकता है। पदार्थ तो रहेगा, मगर बिखरा हुआ। हम सब परमाणुओं की अस्थायी जमावट हैं, इससे ज़्यादा या

कम कुछ नहीं। हम सब भौतिक बिखराव और विलीनीकरण की कगार पर हैं।

मानव-निर्मित शून्यता

यह तो कह दिया, मगर चेतना की संवेदना इतनी सशक्त और विवश करने वाली होती है कि हम अन्य मनुष्यों - यानी परमाणुओं की अन्य जमावटों - को पदार्थ से इतर गुण से विभूषित कर देते हैं। और चूँकि हममें से प्रत्येक के लिए परमाणुओं की जो जमावट सबसे महत्वपूर्ण है - यानी मैं स्वयं - इसलिए हम स्वयं को एक भावातीत गुण से विभूषित करते हैं - एक अहं, स्व, मैं-पना। यह मात्र परमाणुओं के संकलन से कहीं ज़्यादा पल्लवित होता है।

इसी प्रकार से, हमारी मानव-निर्मित संस्थाएँ हैं। हम अपनी कला और अपनी संस्कृति और अपनी आचार संहिताओं और अपने कानूनों को एक महान व चिरस्थायी अस्तित्व का पर्याय मानते हैं। हम इन संस्थाओं को ऐसे अधिकार प्रदान करते हैं जो हमसे कहीं आगे जाते हैं। मगर तथ्य यह है कि ये सब हमारे दिमाग की रचनाएँ हैं। दूसरे शब्दों में, ये संस्थाएँ और संहिताएँ और उन पर आरोपित अर्थ, सब तंत्रिकाओं के आदान-प्रदान के परिणाम हैं और तंत्रिकाएँ स्वयं महज़ भौतिक परमाणु हैं। ये सब मानसिक रचनाएँ हैं। इनका यथार्थ वही है जो हम व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से इन्हें प्रदान करते हैं।

बौद्ध लोगों ने इस धारणा को सदियों पहले समझ लिया था। यह खालीपन और अस्थायित्व की बौद्ध अवधारणा का हिस्सा है। भावातीत, अभौतिक, दीर्घ-स्थायी गुण जिन्हें हम अन्य मनुष्यों और मानव संस्थाओं पर आरोपित करते हैं, भ्रम हैं जैसे *द मैट्रिक्स* का कम्प्यूटर-जनित विश्व है। यह यकीनन सही है कि हम मनुष्यों ने, जो कुछ हासिल किया है वह, हमें लगता है कि, असाधारण उपलब्धि है। हमारे पास वैज्ञानिक सिद्धान्त हैं जो विश्व के बारे में सटीक भविष्यवाणियाँ कर सकते हैं। हमने तस्वीरें और संगीत और साहित्य की रचना की है जिन्हें हम सुन्दर और अर्थपूर्ण मानते हैं। हमारे पास कानूनों और सामाजिक संहिताओं की पूरी-

पूरी प्रणालियाँ हैं। मगर इन चीज़ों का हमारे दिमाग से बाहर कोई अन्तर्निहित मूल्य नहीं है। और हमारे दिमाग परमाणुओं की जमावट हैं, जिसकी नियति विघटन और विलीनीकरण की है। इस मायने में हम और हमारी संस्थाएँ सदा शून्यता के निकट होती हैं।

हमारी निजी शून्यता

तो, ऐसे विनम्रता-जनक विचार हमें कहाँ ले जाते हैं? हमारे अस्थायी और स्व-निर्मित यथार्थ के मद्देनज़र हमें, व्यक्तियों के रूप में और समाज के रूप में, अपना जीवन कैसे जीना चाहिए? अपनी निजी शून्यता पर विचार करते हुए, मैंने इन सवालों पर काफी जुगाली की थी और मैं अपने जीवन का मार्गदर्शन करने हेतु कुछ आज़माइशी निष्कर्षों पर पहुँचा हूँ। हर व्यक्ति को अपने लिए स्वयं इन गहन सवालों पर विचार करना चाहिए - सही उत्तर कोई नहीं है। मुझे लगता है कि एक समाज के रूप में हमें यह जानना चाहिए कि हमारे पास अपने कानून और संस्थाएँ, जैसे भी हम उन्हें बनाना चाहें, बनाने की बड़ी ताकत है। कोई बाहरी सत्ता नहीं है। कोई बाहरी सीमाएँ भी नहीं हैं। एकमात्र सीमा हमारी अपनी कल्पनाशक्ति की है। इसलिए हमें विस्तृत रूप से यह सोचने के लिए वक्त निकालना चाहिए कि हम क्या हैं और क्या बनना चाहते हैं।

जहाँ तक हममें से प्रत्येक व्यक्ति का सवाल है, तो जब तक हम अपने दिमाग कम्प्यूटरों में अपलोड नहीं कर देते, तब तक हम अपने भौतिक शरीर और मस्तिष्क में कैद हैं। और चाहे बेहतर के लिए हो या बदतर के लिए, हम अपनी निजी मानसिक अवस्था में फँसे हुए हैं जिसमें हमारी निजी खुशियाँ और पीड़ाएँ शामिल हैं। यथार्थ की हमारी जो भी अवधारणा हो, खुशी और दर्द तो हम सब यकीनन अनुभव करते हैं। हम महसूस करते हैं। देकार्ते का मशहूर कथन है, "मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ।" हम यह भी कह सकते हैं, "मैं महसूस करता हूँ, इसलिए मैं हूँ।" और जब मैं खुशी और दर्द महसूस करने की बात करता हूँ तो मेरा आशय मात्र शारीरिक खुशी और दर्द से नहीं है। प्राचीन एपिक्यूरियन्स[6] के समान, मेरा आशय हर प्रकार की खुशी और पीड़ा से हैः बौद्धिक, कलात्मक, नैतिक, दार्शनिक वगैरह, वगैरह। हम इन सब प्रकार के आनन्द और पीड़ा का अनुभव करते हैं, और हम इनके अनुभव से बच नहीं सकते। ये हमारे शरीर और दिमाग का यथार्थ हैं, हमारा आन्तरिक यथार्थ हैं। और यह वह बिन्दु है जहाँ तक मैं पहुँचा हूँः बेहतर होगा मैं इस तरह जीऊँ कि अपने आनन्द को अधिकतम कर सकूँ और अपनी पीड़ाओं को न्यूनतम। तदनुसार, मैं कोशिश

[6] यूनानी दार्शनिक एपिक्यूरस (341-270 ई.पू.) को मानने वाले। एपिक्यूरस का कथन था कि मनुष्य के जीवन का उद्देश्य है शारीरिक पीड़ा और मानसिक दिक्कतों से मुक्ति।

करता हूँ स्वादिष्ट भोजन खाऊँ, अपने परिवार को सहारा दूँ, सुन्दर चीज़ें बनाऊँ, और अपने से कम खुशकिस्मत लोगों की मदद करूँ क्योंकि ऐसे कार्यों से मुझे आनन्द मिलता है। इसी प्रकार से, मैं कोशिश करता हूँ कि उबाऊ ज़िन्दगी न जीऊँ , निजी अराजकता से बचूँ और अन्य लोगों को चोट पहुँचाने से बचूँ क्योंकि ऐसे कार्य मुझे पीड़ा पहुँचाते हैं। मुझे इसी तरह जीना चाहिए। मुझसे गहरे कई विचारक, जिनमें से ब्रिटिश दार्शनिक जेरेमी बेंथम सबसे उल्लेखनीय हैं, अलग-अलग रास्तों से इन्हीं निष्कर्षों तक पहुँचे हैं।

जो मुझे लगता है और मैं जानता हूँ वह यह है कि मैं समय के विशाल प्रवाह में इस क्षण यहाँ हूँ। मैं शून्य का हिस्सा नहीं हूँ। मैं क्वांटम निर्वात में उतार-चढ़ाव नहीं हूँ। हालाँकि मैं जानता हूँ कि मेरे परमाणु एक दिन मिट्टी और हवा में बिखर जाएँगे, मेरा अस्तित्व नहीं रहेगा, कि मैं किसी किस्म के शून्य का हिस्सा बन जाऊँगा, मगर मैं लिखने की मेज़ पर अपने हाथ को देख सकता हूँ। मैं खिड़की से आती धूप की गर्मी को महसूस कर सकता हूँ। और बाहर झाँकूँ तो मैं चीड़ की पत्तियों से ढँका रास्ता देख सकता हूँ जो समुद्र तक जाता है। अभी, इसी क्षण।

एलन लाइटमैनः एक भौतिक शास्त्री, उपन्यासकार और मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में मानविकी अभ्यास के प्रोफेसर हैं। *दी एक्सीडेंटल युनिवर्स* उनकी नवीनतम पुस्तक है।

अँग्रेज़ी से अनुवादः सुशील जोशीः एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

सभी चित्रः इशिता बिस्वासः दिल्ली विश्वविद्यालय से समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर। सृष्टि स्कूल ऑफ आर्ट, डिज़ाइन एंड टेक्नोलॉजी, बैंगलोर से आर्ट और डिज़ाइन में डिप्लोमा। स्वतंत्र चित्रकार एवं डिज़ाइनर हैं।

यह आलेख नॉटिलस मैगज़ीन के अंक-अगस्त 2014 से साभार।